'कलि-कथा : वाया बाईपास' : उपनिवेशन का इतिहास

- आर्या ई आर

सार संक्षेप :

उपनिवेशन और उसका नैरंतर्य भी इतिहास लेखन का अभिन्न अंग है। यूरोपीय देशों द्वारा तीसरी दुनिया के देशों पर राजनीतिक और आर्थिक वर्चस्व स्थापना का जो उपक्रम है, वही उपनिवेशन है। 'कलि-कथा : वाया बाइपास' (प्रकाशन - 2002) अलका सरावगी का पहला उपन्यास है। लेखिका प्रस्तुत उपन्यास में एक परिवार की छः पीढ़ियों की कथा को आधार बनाते हुए उपनिवेशन के तीनों पड़ावों को दिखाने का प्रयास करती हैं। इस उपन्यास का केंद्रीय पात्र किशोर बाबू की ज़िंदगी औपनिवेशिक काल से शुरू होकर उत्तर औपनिवेशिक संदर्भों से गुज़रकर वर्तमान नव औपनिशिक प्रवृत्तियों से जूंझ रही है। इसके साथ ही पूरे भारत का इतिहास भी खुल जाता है।

बीज शब्द : उपनिवेशन, उत्तर उपनिवेशन, नव उपनिवेशन, पूंजीवाद, इतिहास

व्यतीत घटनाओं को इतिहास कहना सामान्य रूप से सही है। लेकिन ऐसे कहने में कुछ मुसीबतें भी उपजती हैं। क्योंकि अतीत की सभी घटनाएं इतिहास लेखन का विषय नहीं बन पाती हैं। इतिहासकार विषय की प्रमुखता और तथ्यों को ध्यान में रखते हुए उसकी व्याख्या करता है और साथ ही साथ अपनी वैचारिकी के अनुरूप के निष्कर्ष तक पहुंचते हुए उसे रेखांकित करता है। इस प्रकार लिखा गया (रेखांकित किया गया) इतिहास ही माननीय है। 'इतिहास मानव अतीत का अभिलेख है, यह मानव सभ्यता का अभिलेख है।' (Gawronski, 2) इतिहास मात्र अतीत से जुड़ा हुआ नहीं, इसका संबंध वर्तमान और भविष्य से भी है। भूत के आधार पर वर्तमान का आकलन और भविष्य को तय करने के लिए इतिहास की ज़रुरत है। इस प्रकार इतिहास मानव जीवन को दिशानिर्देश देता है।

उपनिवेशन और उसका नैरंतर्य भी इतिहास लेखन का अभिन्न अंग है। यूरोपीय देशों द्वारा तीसरी दुनिया के देशों पर राजनीतिक और आर्थिक वर्चस्व स्थापना का जो उपक्रम है, वही उपनिवेशन है। बिपिन चंद्र ने उपनिवेशन को समग्र रूप से रेखांकित किया है - "यह एक ऐसी संरचना है जो पूरी तरह व्यवस्थित है। यह समाज को निर्मित करने की एक नितांत भिन्न प्रक्रिया है। आधारभूत

रूप से इसके बागडोर उपनिवेशों में कार्यरत विदेशी पूंजीवादी वर्ग के हाथ में है। बौद्धिक, राजनैतिक, आर्थिक संरचना को इसका माध्यम बनाया जाता है और उसका स्वरुप पूंजीवाद के ऐतिहासिक विकास के साथ एक विश्वप्रणाली के रूप में परिवर्तित होता है।" (Chandra, 53) भारत में उपनिवेशन के आरंभ और उसकी निरंतरता को लेकर अध्ययन और इतिहास लेखन की एक विशिष्ट धारा प्रवाहित होती है। क्योंकि भारत देश शताब्दियों तक यूरोपीय उपनिवेश के रूप में अपना अस्तित्व खो बैठ रहा था। भारत में उपनिवेशन की शुरुआत 15 वीं शताब्दी में हुई। 27 मई 1498 ई॰ में पुर्तगाली वास्कोडिगामा व्यापार के उद्देश्य से समुद्रीय मार्ग केरल के कालीकट पहुंचे, तब से पश्चिमी देशों और भारत के बीच व्यापारिक संबंध का एक नया अध्याय शुरू हुआ। व्यापार की सुगमता के लिए पाश्चात्यों ने कंपनियों की स्थापना की। बाद में इन कंपनियों के नेतृत्व में भारत के विभिन्न प्रदेशों में व्यापारिक कोठियां फैलाई गईं। 1757 ई॰ तक आते-आते अंग्रेज़ों को छोड़कर अन्य यूरोपीय व्यापारिक शक्तियों का कड़ापन घटने लगा। 1757 ई॰ के प्लासी युद्ध के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी अपने व्यापारिक उद्देश्य से बढ़कर, साम्राज्य स्थापना पर अधिक ज़ोर देने लगी। कंपनी की यह प्रक्रिया 1857 ई॰ के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम तक ज़ारी रही। 1857 ई॰ के बाद कंपनी शासन के स्थान पर ब्रिटीश राज होने लगा। इसके साथ ही साथ स्वदेशियों के मन में क्रांति की भावना भी प्रखर होने लगी। अनेक देश-स्नेहियों के अथक प्रयास और निरंतर आंदोलन से 1947 ई॰ को भारत औपनिवेशिक शक्तियों से स्वतंत्र हुआ। यहाँ तक आते-आते वर्षों तक के शोषण से भारत पूर्ण रूप से ध्वस्त हो गया था। अत: एक नव भारत का निर्माण स्वतंत्र भारत के सामने गंभीर चुनौती था। स्वतंत्रता के पश्चात् के इस चुनौतीपूर्ण परिवेश को उत्तर औपनिवेशिक समय कहते हैं। यह समय पूर्ण रूप से संकटग्रस्त था। अच्छे समय की आशा करते-करते जनता थक गयी। आम आदमी को मोहभंग के इसी काल में शासक वर्ग के अदूरदर्शी नीतियों और दमन से दबना पड़ा। इस लंबे अर्से में भारत के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेशों में बहुत कुछ बदलाव आया। बीसवीं सदी के अंत तक आते-आते, स्पष्ट कहे तो नब्बे के दशक के शुरुआत से भारत में एक नई आर्थिक व्यवस्था का आरंभ हुआ। उदारीकरण और निजीकरण पर आधारित यह नई आर्थिक नीति पूंजीवादी तंत्र को बढ़ावा देती है। पूंजी के केंद्रीकरण से अमीर और गरीब के बीच की खाई बढ़ती जा रही है। इसके साथ ही भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ भी बदल रहे हैं। उपभोक्तावादी आधुनिक संस्कृति और सभ्यता हर कहीं फैल रही हैं। अर्थ के आधार पर ही मनुष्य अपने जीवन को तय कर रहा है। लाभ के लोभ में ज़िंदगी फुर्तीली बन जाती है।

ज़िंदगी के इस तीव्रगामी बहाव में मनुष्य मानवीयता या मानवीय संवेदनाओं को खो बैठ रहा है। इसी संदर्भ में साहित्य चेतावनी देते हुए अवबोध और जागरण की नई दिशा दिखा रहा है।

'कलि-कथा : वाया बाइपास' (प्रकाशन - 2002) अलका सरावगी का पहला उपन्यास है। लेखिका प्रस्तुत उपन्यास में एक परिवार की छः पीढ़ियों की कथा को आधार बनाते हुए उपनिवेशन के तीनों पड़ावों को दिखाने का प्रयास करती हैं। यह उपन्यास केंद्रीय पात्र किशोर बाबू के प्रपितामह घमंडीलाल से लेकर उसके पुत्र तक की लंबी जीवन गाथा है। 1857 ई॰ में हैमिल्टन साहब के साथ घमंडीलाल की मुलाकात होती है। तब से उनके बीच आपसी संबंध बढ़ जाता है। हैमिल्टन साहब की सहायता से वह कलकता में अपना रोज़गार करता है। घमंडीलाल के पुत्र रामविलास की व्यापारिक कार्यक्रमों में बढ़ोत्तरी दिलाने में हैमिल्टन साहब का पुत्र जॉन हैमिल्टन का एक बड़ा हाथ है। ये दोनों अंग्रेज़ों के साथ मेल-मिलाप से कलकता में अपने परिवार को बसाना चाहते हैं। लेकिन रामविलास का पुत्र केदारनाथ इसके बिलकुल विरुद्ध था। वह अंग्रेज़ों से नफ़रत दिखाते हुए अपनी जन्मभूमि में मारवाड़ी समाज के सुधार के लिए प्रयत्न करता है। इस परिवार के हरेक पात्र विभिन्न कालखंडों के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। किशोर बाबू केदारनाथ का पुत्र भूरामल का बेटा है। किशोर बाबू के मित्र अमोलक गांधीवादी विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित व्यक्ति है। उसी प्रकार शांतनू सुभाष चंद्र बॉस से। लार्ड कर्नल के नेतृत्व में किया गया बंगाल विभाजन, 1942 ई॰ में घटित भारत छोड़ो आंदोलन, हिंदू-मुसलमान दंगे, 1992 ई॰ की बाबरी मज़जिद ध्वंस आदि घटनाओं को अत्यधिक मार्मिक ढ़ंग से प्रस्तुत करने में लेखिका सक्षम निकली हैं। उपन्यास में उपनिवेशन के तीन स्तरों की तरह 1925 ई॰ में जन्मे किशोर बाबू की जिंदगी को दर्शाया गया है। "किशोर बाबू की एक ज़िंदगी में तीन ज़िंदगियां जी गई हैं : पहली ज़िंदगी अपने स्कूल के मित्रों सुभाष-भक्त शांतनु और गांधी-प्रेमी अमोलक के साथ गुजारे 1940-47 के उथल-पुथल भरे दिनों की है - '43 का बंगाल का अकाल', '46 की द ग्रेट कैलकटा किलिंग' और '47 का विभाजन'। दूसरी ज़िंदगी उसके बाद के पचास सालों की है जिसमें पहली ज़िंदगी की छाया तक नहीं है। तीसरी ज़िंदगी बाईपास आपरेशन के बाद उस वर्तमान से शुरू होती है, जो अभी हर वक्त हमारे आस-पास उपस्थित है।" (सरावगी, फ्लाप से) इस प्रकार किशोर बाबू की ज़िंदगी औपनिवेशिक काल से शुरू होकर उत्तर औपनिवेशिक संदर्भों से गुज़रकर वर्तमान नव औपनिशिक प्रवृत्तियों से जूंझ रही है।

किशोर बाबू और उसके परिवार की कहानी उपनिवेशन के सारे मुद्दों से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से संबद्ध है। इस प्रकार लेखिका किशोर बाबू के ज़रिए भारत के औपनिवेशिक इतिहास को प्रस्तुत करने का प्रयास करती हैं। 1757 के प्लासी युद्ध में क्लायव के नेतृत्व में अंग्रेज़ों ने मीरजाफर की सहायता से सिराजुद्दौला को हराकर कलकत्ता में अपना अधिकार स्थापित किया। प्लासी युद्ध ने अंग्रेज़ों की जड़ों को भारत में मज़बूत बनाने में गीली मिट्टी प्रदान की। 'कलि-कथा : वाया बाईपास' इस ऐतिहासिक औपनिवेशिक संदर्भ को अंकित करता है- "अंग्रेज़ों के साथ मिलकर जिस मीरजाफर ने सिराजुद्दौला से दगा किया, उससे खुद उसका खून का रिश्ता था। ताकत और पैसों के पीछे पागल लोगों की कोई अलग जाति नहीं होती। वे सब एक ही जाति के होते हैं। वे अनादिकाल से अपने को बेचते आए हैं और हमेशा बेचते रहेंगे।" (सरावगी, 24) लोगों के नज़रिए में मानवीय मूल्यों की तुलना में पैसा ज़्यादा मूल्यवान है। लेखिका पैसे के लिए खुद को भी बेचनेवाले लोगों की तस्वीर खींचती हैं। किशोर बाबू के परदादा घमंडीलाल और रामविलास मीरजाफ़र के समान अंग्रेज़ों के इशारे पर नाचनेवाली कठपुतलियाँ हैं। ब्रिटेन के हैमिल्टन के संग में घमंडीलाल और उनका पुत्र जॉन हैमिल्टन के साथ रामविलास जूट की कंपनी में काम करते हैं। दोनों अंग्रेज़ों के लिए कमरतोड़ मेहनत करते हैं। रामविलास की दासता को देखकर कंपनी के अंग्रेज़ वर्किंग पार्टनर को हँसी आती है। "हैमिल्टन साहब की ऑफिस में उनके एक अंग्रेज पार्टनर उसकी भाग-दौड़ और काम की लगन देखकर उसे हंसकर 'चार्ली' कहकर पुकारते हैं। न जाने यह चार्ली कौन है जिसकी शायद शक्ल या तौर-तरीके उससे मिलते-जुलते हैं। उसने हैमिल्टन साहब से पूछा था, लेकिन वे कुछ बताने के बजाय गंभीर हो गए थे। न जाने उन्होंने अपने पार्टनर से क्या कहा कि उसने रामविलास को 'चार्ली' कहना बंद कर दिया।" (सरावगी, 40) चार्ली मशहूर मसखरा है। अंग्रेज़ आदमी की नज़र में रामविलास भी एक जोकर है। मगर रामविलास का बेटा केदारनाथ अपने अस्तित्व और अस्मिता को बनाए रखने के लिए अंग्रेज़ों के विरुद्ध आवाज़ उठाता है। जॉन हैमिल्टन अस्त्र के बदले अक्ल का प्रयोग करता है। जॉन हैमिल्टन राम विलास से कहता है- "शायद भिवानी में इसकी दोस्ती किसी टेररिस्ट से या उनसे सहानुभूति रखनेवालों में किसी व्यक्ति से हो गई है। जहां तक मैं समझता हूं यह लड़का ये सब किताबें उसी के लिए ले जा रहा है। तुम चिंता मत करो, यहां के पुलिस कमिश्नर से मेरी बचपन की दोस्ती है। वह भिवानी के कमिश्नर को चिट्ठी लिखकर तुम्हारे बेटे के गुरु को वहां से हटवा देगा। तुम केदार को बस इतना समझओ कि वह राजनीतिक मामलों में न पड़कर समाज-सेवा करे। बल्कि उसे एक पुस्तकालय खोलने के

लिए पैसे दे दो। नदी की धारा को उसके रास्ते से हटा नहीं सकते, पर उसे मोड़ना बहुत मुश्किल काम नहीं है।" (सरावगी, 49) उसने पहले से ही चिकनी चुपड़ी बातों से रामविलास को अपना दास बनाया था। लेकिन रामविलास कभी भी अपनी मानसिक गुलामीपन से वाकिफ़ नहीं था। अत: पिता रामविलास ही अपने पुत्र केदारनाथ के विद्रोह की चिंगारियों को बुझाने का प्रयास करता है। रामविलास मीरजाफर बन गया था।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद 1947 में औपनिवेशिक शक्तियों के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप से भारत स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्र होने पर भी भारत की आम जनता के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आया। युद्ध के फलस्वरूप अकाल, गरीबी, भुखमरी ही फ़ैल गए। स्वतंत्र भारत की सरकार ने भी भारत की आर्थिक प्रगति पर ज़ोर देते हुए आम जनता को अनदेखा कर दिया। इस उत्तर औपनिवेशिक ऐतिहासिक संदर्भ को लेखिका उपन्यास के पन्नों में सोखती हैं। किशोरबाबू प्रश्न करता है- “पंडितजी आए बताइए कि अंग्रेज़ी राज में सरकार हिंदुस्तानियों पर गोली चलाती थी, पर खुद हमारी सरकार जब अपने ही लोगों पर गोली चलवाए, तो इसे आप कौन-सा राज कहेंगे? ये लोग भी वही कर रहे हैं, जो नेहरू के समय से यहाँ हो रहा है।” (सरावगी, 162) औपनिवेशिक शक्तियों से मुक्त होने पर भारत के गरीब आम आदमी अपने जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण रखते हुए स्वदेशी सरकार पर पूर्ण विश्वास करते थे। लेकिन सरकार औद्योगिक भारत को मज़बूत बनाने में व्यग्र थी, जिसमें आम जनता की आशा निराशा में बदल गयी। शताब्दियों तक के साम्राज्यवादी शोषण और दमन से मुक्त होकर भारत लोकतांत्रिक सत्ता के भरोसे पर दिन काटता रहा। स्वतंत्रता पूर्व भारत के कोने-कोने से सत्य, स्नेह, अहिंसा, न्याय, धर्म आदि-आदि मानवीय मूल्यों के लिए ऊँची आवाज़ें गूँज उठती थीं। लेकिन स्वतंत्र होकर पचास वर्ष के पश्चात इन मूल्यों के लिए एक भनक तक नहीं। लेखिका अपना पात्र किशोर बाबू के ज़रिए स्वातंत्रोत्तर भारत के मूल्य विघटन और लोकतंत्र की गिरावट की स्थिति को दर्शाने का प्रयास करती हैं। "किशोर बाबू की एक जिंदगी में तीन जिंदगियां जी गई हैं। देश की आजादी तक यानी बाइस साल की उम्र तक उनकी एक जिंदगी थी। उसके बाद उनकी दूसरी जिंदगी शुरू होती है - पूरे पचास साल की जिंदगी। इस दूसरी जिंदगी में पहली जिंदगी की कोई छाया तक नहीं थी। इसलिए किशोर बाबू उसे एक नए जन्म की तरह ही अब देख पाते हैं। यह भला कौन कह सकता है कि किशोर बाबू की जिंदगी के ये पचास साल भारतवर्ष के 'लोकतंत्र' के पचास सालों की तरह रहे हैं, जिनमें आजादी की लड़ाई के आदर्शों की

खुरचन तक नहीं रही।" (सरावगी, 109) यह लोकतांत्रिक मूल्य-विघटन भारत को धीरे-धीरे और एक साम्राज्यवादी शासन-व्यवस्था की ओर धकेल देने लगा। स्वार्थता और अतिरंजित भोगातुरता ने लोगों को एक नई अपसंस्कृति के मंच पर ला खड़ा कर दिया।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद तीसरी दुनिया के देशों ने औपनिवेशिक शक्तियों के चंगुल से मुक्त होकर राजनीतिक स्वतंत्रता की राहत का सांस ली, जबकि आर्थिक उपनिवेशन की एक अंतर्धारा तब भी प्रवाहित होती थी। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोश, विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन ने इस धारा को शक्ति प्रदान की। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन 'गैट' (टैरिफ और व्यापार का सामान्य समझौता) के रूप में देशों के बीच के व्यापार को सुगम बनाने का प्रयत्न करता रहा। भारतीय संदर्भ में बीसवीं सदी के अंतिम दशक तक आते-आते इस आर्थिक धारा ने अपने साम्राज्यवादी चेहरे को प्रत्यक्ष रूप दे दिया। गैट ने विश्व व्यापार संगठन के रूप में अपना स्वरुप बदल दिया। उसने आर्थिक उदारीकरण के ज़रिए भूमंडलीकरण या वैश्वीकरण को प्रश्रय दिया और पूंजीवाद ज़ोर पकड़ने लगा। साम्राज्य स्थापना की इस नवीन तरीके को नव उपनिवेशन कहते हैं। इसके तहत विकसित साम्राज्यवादी देश और वहां की बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत जैसे तीसरी दुनिया के देशों के आर्थिक मदद के नाम पर उनकी अर्थव्यवस्था पर अपना नियंत्रण स्थापित कर रहे हैं। उपन्यास में किशोर बाबू पंडितजी से कहता है- “पंडितजी, मैंने अभी पढ़ा था कि ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत को जितना लूटा था, उससे हज़ारों गुना लूट अब विदेशी कंपनियां हमारे देश में कर रही हैं। डॉलर की तुलना में रूपए का दाम इतना गिरा दिया है कि यहां से एक करोड़ का माल विदेश जाता है, तो उसकी कीमत मिलती है एक चौथाई। यानी सिर्फ पच्चीस लाख। कहते हैं कि हम आर्थिक रूप से फिर गुलाम हो गए हैं।” (सरावगी, 163) बाज़ारीकरण और उपभोक्तावाद ने डॉलर की इस कूटनीति को बढ़ावा दिया। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने लोगों को निरा उपभोक्ता बनाकर अपनी पूंजी में उत्तरोत्तर वृद्धि हासिल की। नए तौर-तरीके से उपस्थित इस नव साम्राजयवाद या वैश्वीकरण के चंगुल में युवा पीढ़ी फंस गयी है। उनके लिए स्वतंत्रता का अर्थ ही बदल चुका है। किशोर बाबू का बेटा स्वतंत्रता दिवस पर अपने बाप को सरप्राइस के रूप में 'फ्रीडम' की चाबी देता है। "किशोर बाबू के लड़के ने मुट्ठी खोल दी। उसमें एक चाभी देखकर किशोर बाबू हतप्रभ हो गए। "यह क्या है" उनके मुंह से निकला। "फ्रीडम्"- लड़के ने हंसते हुए कहा। "फ्रीडम?" किशोर बाबू को बहुत बुरा लगा। एक चाभी से स्वतंत्रता मिल जाती है, तो इतने लोगों को जान देने की क्या जरूरत थी?

ऐसे शब्द के साथ इस तरह का हल्का मजाक उन्हें बहुत खराब लगा।" (सरावगी, 197) किशोर बाबू के लिए 'फ्रीडम' एक मामूली शब्द नहीं। अपनी आत्मा की तराइयों की अंतिम परत को छूने का अटूट मुक्ति भाव है। यह खून पसीना करके और जान न्योछावर करके किए गए अदम्य संघर्ष और जिजीविषा का परिणाम है। लेकिन किशोर बाबू के बेटे के लिए यह केवल एक ब्रांट का नाम मात्र है। नव साम्राज्यवादी शक्ति अमेरिका की एक बहुराष्ट्रीय कंपनी है 'फॉर्ड'। फॉर्ड कंपनी की गाड़ी है 'फ्रीडम फॉर्ड'। भारत की आज़ादी की पचासवीं वर्षगांठ पर झंडे के तीन रंगों में गाडियाँ निकालकर फॉर्ड कंपनी मार्केट में नया परीक्षण करती है। किशोर बाबू का बेटा फ्रीडम फॉर्ड के साथ भारत का स्वतंत्रता दिवस मनाता है। अफ़सोस की बात है कि भारतीय जनता फिर से अपनी अस्मिता को खो बैठ रही है।

उपनिवेशन और इतिहास - दोनों को अलग-अलग करके देखना संगत नहीं। क्योंकि भारतीय इतिहास एक विस्तृत औपनिवेशिक परंपरा के विश्लेषण से भी संबंध है। काल और परिवेश के अनुरूप साम्राज्य-स्थापना की इस सुदीर्घ यात्रा में भले ही मार्ग में भिन्नता हो पर औपनिवेशिक, उत्तर औपनिवेशिक और नव औपनिवेशिक तंत्र का एक ही लक्ष्य और इतिहास है - आर्थिक दोहन और लूटपाट। अलका सरावगी ‘कलि-कथा : वाया बाईपास’ में इस ऐतिहासिक तथ्य को शब्दबद्ध करती हैं।

निष्कर्ष :

उपनिवेशन और इतिहास - दोनों को अलग-अलग करके देखना संगत नहीं। क्योंकि भारतीय इतिहास एक विस्तृत औपनिवेशिक परंपरा के विश्लेषण से भी संबंध है। काल और परिवेश के अनुरूप साम्राज्य-स्थापना की इस सुदीर्घ यात्रा में भले ही मार्ग में भिन्नता हो पर औपनिवेशिक, उत्तर औपनिवेशिक और नव औपनिवेशिक तंत्र का एक ही लक्ष्य और इतिहास है - आर्थिक दोहन और लूटपाट। अलका सरावगी अपना उपन्यास ‘कलि-कथा : वाया बाईपास’ में इस ऐतिहासिक तथ्य को शब्दबद्ध करती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. सरावगी अलका, कलि-कथा : वाया बाइपास, आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा, सं. 2019

2. Gawronski Donald V, History: Meaning and Method, Scott, Foresman, Ed.1969, P.2

3. Chandra Bipan, Essays on Colonialism, Orient BlackSwan, Ed.1999 P.53

आर्या ई आर

शोधछात्रा, श्री शंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय, कालटी, एरणाकुलम, केरल

ईमेलः aryakrishna167@gmail.com, Phone : 8593805818